

हिन्दुत्व की परिभाषा एवं

हिन्दू शब्द का सत्प्रयोग तथा अपप्रयोग

आसिंधुसिंधुपर्यन्ता यस्य भारतभूमिका ।

पितृभूः पुण्यभूश्चैव स वै 'हिन्दु' रिति स्मृतः ॥

'हिन्दू' शब्द हिन्दू संगठन का प्रमुख आधार है, अतएव इस 'हिन्दू' शब्द का अर्थ जिस प्रमाण में व्यापक या संकुचित, दृढ़ या ढीला, चिरन्तन या चंचल होगा उसी प्रमाण में उस आधार पर निर्मित हिन्दू-संगठन की यह प्रचंड बनावट भी व्यापक, भरकम तथा स्थायी होने वाली है। हिन्दू महासभा क्या तथा उसने उठाया हुआ हिन्दू संगठन का महान् कार्य क्या, जब तक वह 'हिन्दू किसे कहा जाय ?' इस प्रश्न का निश्चित उत्तर नहीं देता तब तक उसका एक पग भी दिशाभ्रम के बिना आगे बढ़ना असम्भव होगा, अनर्थकारी होगा।

एतदर्थ, जिन-जिन लोगों ने हिन्दू संगठन का कार्य करने का व्रत लिया है उन सभी के उपयोग हेतु इस अत्यन्त महत्त्वपूर्ण 'हिन्दू' शब्द के सम्बन्ध में वह जानकारी सूत्ररूप में इस लेख में प्रस्तुत करने का हमारा उद्देश्य है जो हमारे विचार से प्रत्येक हिन्दू को कण्ठस्थ होना अत्यावश्यक है। उक्त प्रस्तुतीकरण के पूर्व ही हम पाठकों से निवेदन करना चाहेंगे कि उन सूत्रमय विधानों का स्पष्टीकरण एवं समर्थन इस संक्षिप्त लेख में करना असम्भव होने से, जिन्हें वह समर्थन एवं स्पष्टीकरण देखने की इच्छा हो वे हमारे 'हिन्दुत्व' नामक ग्रंथ में अवश्य देखें। इतना ही नहीं तो हम यह भी स्पष्ट कर देना आवश्यक समझते हैं कि उस मूल ग्रंथ का पठन किये बिना ही इस लेख के विधानों पर उतावलेपन से आक्षेप न करें, क्योंकि उक्त ग्रंथ के पठन से उन आक्षेपों

में से बहुत से आक्षेप अनायास ही दूर हो जाएँगे ऐसी हमारी धारणा है।

‘हिन्दू’ शब्द की प्राचीनता

(१) हिन्दू शब्द की उत्पत्ति न तो मुसलमानों द्वारा हुई है न ही मुसलमानों ने प्राथमिक रूप से वह शब्द हमारे राष्ट्र के लिये सम्बोधित ही किया है—जिस काल में ‘हिन्दू’ शब्द की उत्पत्ति के सम्बन्ध में पर्याप्त गवेषणा ही नहीं हुई थी उस काल की यह दुष्ट दन्त-कथा भर है? ‘हिन्दू’ शब्द की ऐतिहासिक उत्पत्ति के निम्नलिखित स्पष्टीकरण से यह सिद्ध हो जाएगा।

(२) हिन्दू, हिन्दुस्थान, हिन्द इन प्राकृत शब्दों का मूल उद्गम ऋग्वेदकालीन सप्तसिन्धु नामक हमारे अपने प्राचीनतम राष्ट्रीय अभिधा में ही है—

हमारे वेदकालीन पूर्वजों ने ऋग्वेद में ‘सप्तसिन्धवः’ इस शब्द को देशवाचक एवं राष्ट्रवाचक अर्थों में ही, स्वतः की राष्ट्रीय अभिधा के रूप में, स्वतः के हेतु ही प्रयुक्त किया है।

उस प्राचीन काल में हमारे निकटस्थ ईरान, बाबिलोन, प्राचीन अरब आदि राष्ट्र हमें हमारे ‘सप्तसिन्धु’ इसी राष्ट्रीय अभिधा से जानते थे। ‘पारसिकों ने’ ‘पारसियों ने’ ढाई हजार वर्ष पूर्व के उनके धर्मग्रंथों में हमारे राष्ट्र को ‘हप्तहिन्दू’ से ही सम्बोधित किया है। तत्कालीन प्राचीन ‘बेबोलियन’ ग्रंथों में हमारे देश से निर्यातित भीने तथा सुन्दर वस्त्रों को ‘सिन्धु’ या ‘सिन्धुव’ कहा हुआ है।

अलेक्जण्डर के दो सौ वर्ष पूर्व का ग्रीक इतिहासकार हेकाटेअस भी हमारे प्राचीन राष्ट्र को हमारे ही सिन्धु शब्द के ग्रीक रूप Indu India इसी नाम से उल्लेख करता है। बुद्धकाल में हिन्दुस्थान में आये हुए ‘चीनी’ यात्री हुएन्त्संग ने भी हमारे राष्ट्र को सिन्धु शब्द का चीनी अपभ्रंश ‘शिन्दु’ इसी अभिधा से सम्बोधित किया था। और तो और, मोहम्मद पैगम्बर के जन्म के पूर्व जब अरबी लोग शैव एवं शाक्त पन्थ सदृश धर्म के अनुयायी थे और जब मुसलमानी धर्म का पता ठिकाना भी अरबों को

ज्ञात नहीं था तब दो 'हजार वर्ष पूर्व के एक अरब ग्रंथ में' हमारे राष्ट्र के सम्बन्ध में वर्णन करते हुए हिन्द एवं हिन्दू इन नामों का गौरव से उच्चारण किया गया है। उदाहरण के लिए लखी बीने अखतब बीने तुर्की की निम्नांकित पंक्तियों को देखिये—

अया मुवारकल अर्जे या शैवेनोहा मिनल हिंदे ॥

वा अरा दक्कला हो मईयो नज्जेला जिकतुन ॥

व हल्ल तज्जली यतुन ऐनरु सहि अरव अतुन जिक्रा ॥

व हाजे हियोन लज्जेलुर रसूला मिनजा अनल 'हिन्दजुन' ॥

दूसरा अरब कवि, अरबों के मुसलमान धर्म पूर्व का अभिमानी उमर बीने हाशिम अबुल हकम, महादेवजी-शंकरजी की स्तुतिवाचक कविता में लिखता है—

व अह लोलहा अजरु अरमीमन 'महादेउ' व मनाजेता इल मुददीने
मिनहुम व सेयतरु ॥१॥ म अस्सेर अखलका न असानन कल्ल हुम यन
हुवा नजू मुन अजाअत सुम्मा गाबुल 'हिन्दु' ॥२॥ व सहबी कया माफिल
मका मिल 'हिन्दे' यौमना यकूलूना लात हज्ज न फइन्नकतो वज्जरु ॥३॥

भविष्य पुराण का आधार

इस प्रकार हमारे सिन्धुतटीय वेदकालीन राष्ट्र की हमारी स्वतः की 'सप्तसिन्धु' यह जो अभिधा थी उसी से ही हप्तहिन्दु, हिन्दु, शिन्दु, सिन्धु, Indus ये हमारी प्राचीन विशिष्ट संज्ञाएं हमें प्राप्त हुईं। उच्चारण भिन्न है पर मूल शब्द सप्तसिन्धु यही है। उसका एक प्रमाण जो आज भी यथावत् है यह है कि सिन्धुतटीय हमारे राष्ट्र के एक प्रदेश को हमारा स्वतः का प्राचीनतम 'सिन्धुदेश' यह नाम अभी भी यथावत् ही रहा हुआ है।

(३) हिन्दू, हिन्दुस्थान आदि प्राकृत रूप हमारे सप्तसिन्धु, सिन्धु, सिन्धुस्थान इन संस्कृत एवं स्वकीय तथा प्राचीन अभिधाओं के ही प्राकृत रूप हैं, यह बात हमारे प्राचीन पंडितवर्ग को भी ज्ञात थी। उन नामों को वर्तमान में बादरायण सम्बन्ध से जोड़ा नहीं गया है। इसे स्पष्ट करने वाले भविष्यपुराण के निम्नलिखित उल्लेख जितने

अभिनन्दनीय हैं उतने ही उद्बोधक भी हैं। 'सप्तसिन्धु' का ही प्राकृत रूप 'हप्तहिन्दु' है यह बात उक्त पुराण के निम्नलिखित श्लोकों में वर्णित है—

जानुस्थाने जैनुशब्दः सप्तसिन्धुस्तथैव च ॥ हप्तहिन्दुर्यावनीति पुनर्ज्ञेया गुरुण्डिका ॥१॥

शालिवाहन कुल के राजाओं की कथाओं का वर्णन करते हुए वह पुराण आगे कहता है—

जित्वा शकान् दुराधर्षान् चीनतार्तरिदेशजान् ॥ बाल्हीकान् कामरूपाश्च रोमजान् खुरजान् शठान् ॥ तेषां कोशान्गृहीत्वा च दंडयोग्यानकारयत् ॥ 'स्थापिता तेन मर्यादा म्लेच्छार्याणाम् पृथक् पृथक् ॥ सिन्धुस्थानमिति प्राह् राष्ट्रमार्यस्य चोत्तमम् ॥ म्लेच्छस्थानं परम् सिन्धोः कृतं महात्मना ॥' —भविष्यपुराण प्रतिसर्गपर्व, अ, २

भावार्थ—बाल्हीक, चीन, तार्तरादि म्लेच्छ शत्रुओं का समूल नाश करने के उपरान्त उस भूपति ने सिन्धु को अपने उत्तम आर्य-राष्ट्र की सीमा निश्चित किया। सिन्धु के इस ओर का जो प्रदेश है वह हमारा सिन्धुस्थान एवं उस ओर का जो प्रदेश है वह म्लेच्छस्थान है, ऐसा सीमांकन किया, अटक उल्लंघन के निषेध का नियम भी इसी समय में प्रचलित हुआ। 'नागन्तव्य त्वया भूप पैशाचे देशधूर्तके' इस भविष्यपुराण के श्लोक में भी सिन्धु उल्लंघन का बन्धन उद्धृत है।

इस प्रकार उधर उस सिन्धुसरिता का एवं इधर इस सिन्धु-सागर का उल्लंघन न करें। उनका उल्लंघन करते ही विदेशगमन का निषिद्ध कृत्य हो जाता है। सिन्धुबन्धन की हजार वर्ष पुरानी यह शास्त्राज्ञा भी दर्शाती है कि, उस प्राचीन काल से ही हमारे इस हिन्दु-स्थान की मर्यादा 'आसिन्धुसिन्धुपर्यन्ता' यही मानी जाती थी।

(४) सप्तसिन्धु, सिन्धुदेश, सिन्धुस्थान आदि शब्दों का 'हिन्दु' यह प्राकृत रूप भी हमारे ही प्रकृतीकरण के नियम के अनुरूप हमारे प्राकृत में रुढ़ हो गया—संस्कृत शब्दों के 'स' का हमारे प्राकृत में 'ह'

विकल्प होता है। मारवाड़ी आदि बोलियों में इसके उदाहरण प्रचुरता से दिखाई देते हैं। जैसे केसरी का केहरी, सप्ताह का हप्ता, सत्तर का हत्तर, दश का दहा आदि, अस्मि, असि, स्मः आदि के प्राकृत रूप इसी के उदाहरण हैं। हमारी प्राकृत के समान ही प्राचीन पारसी भाषा भी संस्कृत की ही एक प्राकृत भाषा होने के कारण उसके कई रूप हमारे समान ही बने हुए दिखाई देते हैं। परन्तु केवल इसी आधार पर यह नहीं कहा जा सकता कि वे रूप इधर से आये हैं या इसी आधार पर उन्हें विदेशी भी नहीं माना जा सकता। चन्दभाटपूर्व की हिन्दी की जो पुरानी से पुरानी कविता आज मानी जाती है उसमें भी हिन्दुस्थान शब्द का गौरवयुक्त प्रयोग किया गया है।

अटल थाट महिपाट अटल तारा गढ़ थानम् ॥

अटल नगर अजमेर अटल 'हिंदव-अस्थानम्' ॥१॥

'पृथ्वीराज रासो' में पृथ्वीराज के समकालीन चन्दभाट के काव्य में तो हमारे इस राष्ट्र के 'हिन्दू' इस अभिधान को अत्यन्त गर्व से हमारा समूचा राष्ट्र मानो सिर पर उठाकर नाच रहा था। यह दृश्य प्रत्येक पृष्ठ पर दिखाई देता है। हिन्दुत्वाभिमान से भरपूर ये पंक्तियाँ देखिये—

धनि (धन्य) हिन्दु पृथिराज ! जिने रजवट्ट उजारिय ॥
धनि हिंदु पृथिराज ! बोल कलिमभूभ उगारिय ॥१॥ धनि हिंदु
पृथिराज ! जेन सुविहानह संध्यो ॥ बारबारह गृहिमुक्की अंतकाल
सरबंध्यो ॥२॥ आज भाग चहुवान धर आज भाग हिंदवान ॥ इन
जीवित दिल्लीश्वर गंज न सककै आन ॥३॥

'हिन्दू' शब्द पूर्ण रूप से राष्ट्रीय है

इस काल के उपरान्त की जो स्थिति थी उसे तो बताने की भी कोई आवश्यकता नहीं। आर्यावर्त, भारत आदि समस्त अभिधाओं से भी अधिक प्रमाण में 'हिन्दू' एवं 'हिन्दुस्थान' ये शब्द ही हमारे राष्ट्र एवं राष्ट्रीय जीवन के मूर्धाभिषिक्त आदर्श, अभिमान एवं अभिधान बन बैठे। प्रासाद से लेकर पर्णकुटी तक 'मैं हिन्दू हूँ' यह भावना

परिप्लुत होने लगी। मैं आर्य हूँ, मैं भारतीय हूँ इस स्वतः की स्थिति से अनभिज्ञ होने वाले लाखों लोग मिल सकते थे पर मैं 'हिन्दू' हूँ यह भावना भोंपड़ी-भोंपड़ी में करोड़ों लोगों में जम चुकी थी। उधर पंजाब में श्री गुरुगोविन्दसिंहजी का जो जीवित कार्य था वह उन्हीं के शब्दों में इस प्रकार वर्णित है—सकल जगत में खालसा पन्थ जागे ॥ जगे धर्म 'हिन्दू' सकल भंड भाजे ॥ इधर महाराष्ट्र के समर्थ रामदास जी को जो पीड़ा थी वह भी यही कि 'या भूमंडलाचे ठायी। 'हिन्दू' ऐसा उरला नाही ॥'—इस भूलोक में मानो 'हिन्दू' तो बचा ही नहीं। तेगबहादुर के समान हजारों हुतात्माओं ने 'हिन्दू शब्द का परित्याग करो, नहीं तो प्राणत्याग हेतु तत्पर हो जाओ !' ऐसी शत्रु की धोंस पर प्राण त्याग दिये, पर इस 'हिन्दू' शब्द का परित्याग नहीं किया। अटक से लेकर रामेश्वर तक के लाखों वीर पुरुष इस 'हिन्दुत्व' के सम्मान हेतु पीढ़ियों से युद्धों में जूझते रहे, भगड़ते रहे, खेत रहे। पर अन्ततोगत्वा अहिन्दुओं की एक-एक पादशाही पैरों तले रौंदकर जब उन्होंने हिन्दुपदपादशाही की स्थापना की और फिर समस्त राष्ट्र में विजयदुन्दुभी से जो घोषणा की वह यही कि, 'बुडाला औराया पापी' 'हिन्दुस्थान' बलावले ॥ अभक्तांचा क्षयो भाला आनन्दवनभूवनी ॥'—पापी औरंगजेब का सर्वनाश होकर हिन्दुस्थान सशक्त हो गया है, और इस आनन्दकानन पृथ्वी पर से अभक्तों का अन्त हो चुका है।

(५) उपर्युक्त वर्णित हिन्दू शब्द के इतिहास से यह स्पष्ट हो जाता है कि यह हिन्दू शब्द मूलतः तथा मुख्यतः देशवाचक एवं राष्ट्र-वाचक है, किसी विशिष्ट धर्ममत भर का ही निदर्शक नहीं है—मूल रूप में सप्तसिन्धु यह वेदकालीन शब्द ही उस देश का तथा उसमें निवास करने वाले राष्ट्र का प्रमुख रूप से द्योतक था। हमारे उस ओर के एक प्रदेश का सिन्धु देश यह नाम भी प्रमुखतः दैशिक एवं राष्ट्रीय ही है। विदेशियों ने हमारा वही नाम, उसी अर्थ में हमारे लिए प्रयुक्त किया है।

हिन्दुत्व कोई धर्ममत नहीं है

जिस प्रकार वेद नामक धर्मग्रन्थ के कारण उसके अनुयायियों को वैदिक, बुद्ध नाम पर उसके धार्मिक अनुयायियों को बौद्ध, जिन मतानुयायियों को जैन—गुरु नानकजी के धर्मशिष्यों को सिक्ख, विष्णु देवता के उपासकों को वैष्णव, लिंगपूजकों को लिंगायत ये नाम प्राप्त होते हैं, वैसे हिन्दू यह नाम किसी भी धर्मग्रन्थ से या धर्म-संस्थापक से या धर्ममत से प्रमुखतः या मूलतः निर्मित नहीं हुआ है। वह तो आसिन्धुसिन्धु प्रभृत देश का एवं उसमें निवास करने वाले राष्ट्र का ही प्रमुख रूप से निर्देश करता है और फिर 'इसी सन्दर्भ' में उसकी धर्म संस्कृति का भी।

एतदर्थ ही हिन्दू शब्द की परिभाषा को केवल किसी धर्मग्रन्थ से या धर्ममत से बन्धित करने वाले प्रयास दिशा भ्रम उत्पन्न करने वाले हैं। हिन्दू शब्द की परिभाषा का मूल ऐतिहासिक आधार आसिन्धु सिन्धु भारत भूमिका ही होना चाहिए। वह देश तथा 'उसमें उत्पन्न धर्म' एवं संस्कृति के बन्धनों से अनुप्राणित राष्ट्र, ये ही हिन्दुत्व के दो प्रमुख घटक हैं। अतएव हिन्दुत्व के इतिहास से यथा-सम्भव सम्बन्धित होने वाली परिभाषा इसी प्रकार की होगी कि, "यह आसिन्धु सिन्धु भारत भूमिका, जिसकी पितृभू एवं पुण्यभू है, वही हिन्दू है।"

उपर्युक्त परिभाषा में प्रयुक्त 'पितृभू' एवं 'पुण्यभू' इन शब्दों का उसी प्रकार थोड़ा-सा पारिभाषिक अर्थ है जिस प्रकार प्रत्येक परिभाषा में प्रयुक्त शब्दों का होता है।

'पितृभू' अर्थात् केवल वह भूमि नहीं जहाँ अपने माता-पिता का जन्म हुआ हो, 'पितृभू' तो उस भूमि को कहा जाता है कि जिसमें प्राचीन काल से एक परम्परा से हमारे पूर्वज निवास करते आये हैं। इस कथन पर कुछ लोगों द्वारा त्वरित ही यह शंका उठायी जाती है कि, 'चूँकि गत दो पीढ़ियों से हम अफ्रीका में रहते आये हैं, तो क्या फिर हम हिन्दू नहीं? पर उनके इसी तर्क के कारण उनकी यह

आशंका सतही सिद्ध होती है। भविष्य में समस्त पृथ्वी पर भी यदि हिन्दू अपनी बस्तियाँ स्थापित करें तो भी उसकी प्राचीन परम्परागत, जातीय एवं राष्ट्रीय पूर्वजों की पितृभू यह भारत-भूमि ही होगी।

‘पुण्यभू’ का अर्थ आंग्ल भाषा में Holy land इस शब्द के अर्थ से है। जिस भूमि में किसी धर्म का संस्थापक, ऋषि, अवतार या प्रेषित (पैगम्बर) प्रकट हुआ, उसने उस धर्म को उपदेश दिया, उसके निवास से उस भूमि को धर्म क्षेत्र का पुण्यत्व प्राप्त हुआ, वह उस धर्म की पुण्यभू है। जिस अर्थ में ज्यू या ईसाइयों की पेलेस्टाइन, मुसलमानों की अरेबिया पितृभू है उसी अर्थ में हमने पुण्यभू शब्द का प्रयोग किया है, केवल पुण्यभू इस अर्थ में नहीं।

पितृभू एवं पुण्यभू शब्दों के इन पारिभाषिक अर्थों में यह आसिन्धु-सिन्धु भारत-भूमिका जिस-जिस व्यक्ति की पितृभूमि या पुण्य-भूमि है वह प्रत्येक व्यक्ति हिन्दू है।

हिन्दुत्व की यह परिभाषा जितनी ऐतिहासिक है उतनी ही वर्तमान स्थिति के अनुसार भी है। वह जितनी सत्य है उतनी ही इष्ट भी है। जितनी व्यापक है उतनी ही व्यावर्तक भी है।

भ्रान्ति का मूल

हिन्दुत्व की प्रस्तुत परिभाषा यदि प्रारम्भ में ही उपलब्ध हो जाती तो सिक्ख, जैन इतना ही नहीं तो आर्यसमाजी भी, जो स्वयं को हिन्दू कहलाने में कभी-कभी हिचकिचाते रहे, उनके हिचकिचाने की स्थिति ही उत्पन्न नहीं होती। आंग्ल शासन के पूर्व अपने सारे पन्थ उपपन्थों को एवं धर्म संघों को हिन्दुत्व की कक्षा में ही एकरूप होना पड़ा था—और सम्भवतया उसी अभिधान को स्वतः का अत्यन्त गौरवमयी कुलभूषण इस रूप में हमारा सारा राष्ट्र गर्व से घोषित करता आया है। इनेगिने अपवादों को यदि छोड़ दें तो, मुसलमानों के परधर्मद्वेष ने, उनके अनजाने से क्यों न हो पर अपना सारा हिन्दुराष्ट्र एकरूप करने में, समस्त हिन्दुओं में हिन्दुत्व की भावना कूट-कूटकर भरके उन्हें

एकरूप करने में बहुत बड़ी सहायता की है। मुसलमान राजसत्ता ने स्वतः की सुविधा हेतु, धर्मान्धता के नशे में हिन्दुस्थान के करोड़ों लोगों को हिन्दू एवं मुसलमान इन दो टुकड़ों में बांट दिया—इस प्रकार जो भी व्यक्ति मुसलमान नहीं था वह हिन्दू माना जाने लगा। यह थी उनकी उद्दण्ड परिभाषा।—पर अनायास ही वह ठीक सिद्ध होती गई, 'हमारे लिए' हितकारक हुई, क्योंकि उसी कारण से (अपवादों को छोड़कर) जो मुसलमान नहीं थे वे सबके सब हिन्दुत्व के ध्वज के नीचे आकर संगठित हुए। परन्तु, आंग्ल शासनकाल से, बहुसंख्यत्व के कारण भारी बने इस हिन्दू राष्ट्र के संगठित, एकरूप गुट में जिस भी पद्धति से विघटन हो सके ऐसे प्रयास विपक्षियों द्वारा हेतुतः किये जाने लगे, अतएव तबसे ही 'हिन्दू किसे कहा जाये' इसकी परिभाषा निश्चित करने के प्रयास भी हमारे जननायकों को हेतुतः ही करने पड़े। उस समय दुर्दैव से प्रारम्भ में ही एक महान् दिशाभ्रम हुआ और वह यह कि हिन्दू शब्द का सम्बन्ध केवल हिन्दू धर्म से ही जोड़ा जाकर, 'हिन्दुत्व की व्याख्या न करते हुए, हम हिन्दू धर्म की व्याख्या करने लगे।' हिन्दुत्व की सर्वांगीण व्याख्या राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक आधार पर न करने के कारण उसके उन प्रमुख अंगों की ओर दुर्लक्ष्य होकर, प्रत्येक विचारक उसकी धार्मिक परिभाषा को प्रतिपादित करने लगा और हिन्दू समाज के बहुसंख्यक लोग आज भी वेदानुयायी ही होने से वह परिभाषा सहज ही ऐसी बनी कि 'जो वेदानुयायी है वही हिन्दू है'। इतना ही नहीं तो, बहुजनसमाज में मूर्तिपूजा, शिखा-धारण, गोपूजन आदि हिन्दुओं के जो अनेक आधार हैं, उनमें से जिसे जो भी पसन्द हो, वही हिन्दू धर्म की विशेषता है, ऐसा मानते हुए, जो भी व्यक्ति उनका पालन करेगा वह हिन्दू है ऐसी अनेक की अनेक परिभाषाएँ सामने आई हैं। परिणामस्वरूप वह धर्मग्रन्थ, धर्म-मत न मानने वाले पर पूर्वकाल से हिन्दूराष्ट्र के अंगस्वरूप होने वाले एक-एक भाग उस परिभाषा के कारण ही हिन्दुत्व की कक्षा के बाहर जाने लगे। 'मूलतः हिन्दुत्व यह हिन्दुओं में प्रचलित किसी भी धर्म-
हि०—२

मत से व्यापकतर होने से' उसे बहुसंख्यकों के धर्ममत से समानार्थक मानते ही अल्पसंख्यकों को वह हिन्दू शब्द अप्रिय एवं अनिष्ट भी प्रतीत होने लगा।

विपक्षी अपने दाँव में सफल कैसे हुए ?

श्रुतिस्मृतिपुराणोक्त सनातन धर्म को मानने वाला व्यक्ति हिन्दू है ऐसी यदि 'हिन्दू' शब्द की कोई परिभाषा बनाता तो, स्मृतिपुराणादि को पूर्ण रूप में न मानने वाले या पूर्णतः न मानने वाले आर्यसमाजी आदि केवल वैदिक, उस 'हिन्दू' शब्द का परित्याग करना चाहते, अच्छा ? यदि केवल वेदान्त को ही प्रमाण मानने वाला जो है वह 'हिन्दू' है ऐसी परिभाषा दी जाती तो आर्यसमाजी आदि वैदिक भर उससे हिन्दू कहलाते, पर उसी कारण से, जैन, सिक्ख, बौद्ध आदि वेदप्रमाण न मानने वाले परन्तु हिन्दू राष्ट्र के एकरक्त के सगे भाई 'तो फिर हम हिन्दू हैं ही नहीं' कहकर निषेध करते ? सिक्ख, जैन, बौद्ध, आर्यसमाज, ब्रह्मसमाज, देवसमाज आदि अनेकानेक धर्म या पन्थ कभी-कभी हिन्दू शब्द का जो विरोध करते थे—स्वतः हिन्दू नहीं होने की जो बात करते थे, उसका प्रमुख कारण यही था कि हिन्दुत्व की परिभाषा को धार्मिक दृष्टिकोण से ही बनाने की भ्रान्ति हमने की। हिन्दुत्व तथा हिन्दू धर्म इन दो शब्दों को एक ही माना गया। इस फूट के प्रमुख कारणों में विपक्षियों के राजकीय षड्यन्त्रों की जोड़ हुई। परिणाम यह हुआ कि जब तक हिन्दू शब्द की परिभाषा करने के प्रयास हेतुतः नहीं हुए तब तक केवल परम्परागत भावना से प्राचीन काल से जो हिन्दू राष्ट्र में समाविष्ट थे वे हिन्दुत्व की धार्मिक परिभाषा के बनते ही हेतुतः रुष्ट होकर एक-एक करके अलग हटने लगे—उन्हें अलग हटाने का विपक्ष का दाँव सफल होने लगा।

बहुसंख्यकों के वैदिक धर्म को ही हिन्दू धर्म मानने वालों ने हिन्दू शब्द की परिभाषा किसी भी कुटिल उद्देश्य से नहीं की थी। संघ के बहुसंख्यकों के लक्षण को ही उस संघ का लक्षण स्वभावतः ही सब

ओर माना जाता है। इतना ही नहीं, तो हिन्दूराष्ट्र से एक भी हिन्दू अलग न हो, प्रत्युत वह राष्ट्र अधिकाधिक संगठित हो ऐसा ही उन पूर्वाचार्यों का, हिन्दू शब्द की धर्मनिष्ठ परिभाषा बनाने में सद्उद्देश्य था। 'पर अनजाने से दिशाभ्रम हुआ इच्छा के विपरीत दुष्परिणाम हुआ।'।

परन्तु, हिन्दुत्व के प्रस्तुत लेख के शीर्षस्थ दी हुई परिभाषा से इस भ्रान्ति के मूल पर ही कुठाराघात होता है। परिभाषा तो उसे ही कहते हैं जो अखण्ड में खण्ड बनाती हो, भौगोलिक प्रदेश की सीमाएँ भी दोनों पक्षों के लिए सामान्य ही रहती हैं। मुसलमानी धर्म में भी ऐसे अनेक पन्थ हैं कि वे मुस्लिम हैं या गैर-मुस्लिम यह विवाद परिभाषा से नहीं सुलभता। उदाहरण के लिए आजकल पंजाब में उग्र बना कादियानी पन्थ का विवाद देखिये। एक पक्ष कहता है कि वह मुस्लिम की परिभाषा में नहीं समाता तो दूसरे का यह कहना है कि वह समाता है। मारपीट होने की स्थिति आ चुकी है। ईसाइयों की भी वही अवस्था है, मार्मोन पन्थियों का उदाहरण देखिये। इस प्रकार प्रत्येक परिभाषा का सीमान्त जिस प्रकार विवादास्पद होता है उसी प्रकार वह इस परिभाषा का भी यदि हो तो भी कम से कम वर्तमान में तो 'अधिक से अधिक सत्य, हितकारी एवं सुलभ' ऐसी हिन्दुत्व की यही एकमात्र परिभाषा उपलब्ध है। उसके द्वारा धर्मविषयक प्रश्नों के दुर्लभ्य दलदल को एकदम अलग छोड़कर समस्त हिन्दुओं को एक ही हिन्दू ध्वज के नीचे संगठित करने का राजमार्ग मुक्त कर दिया गया है।

किसे हिन्दू कहें और किसे अहिन्दू ?

जो लोग श्रुतिस्मृतिपुराणोक्त को प्रमाण मानते हैं वे 'सनातनी' कहलाते हैं। जो केवल श्रुति को ही प्रमाण मानते हैं वे 'वैदिक' कहलाते हैं। स्वयं के धर्म को वैदिक धर्म की शाखा इतना ही नहीं तो विकसित रूप भी मानने से जो नकारा करते हैं और इस प्रकार स्वधर्म को पूर्णतः स्वतन्त्र धर्म मानते हैं—ऐसे जैन, सिक्ख, बौद्ध

(भारतीय बौद्ध) आदि कोई भी अपनी धर्मनिष्ठा का यत्किंचित् त्याग किये बिना ही प्रस्तुत हिन्दुत्व की परिभाषानुसार स्वतः को सुखेनैव हिन्दू मान सकता है, इतना ही नहीं तो उससे नकारा कर ही नहीं सकता। वैसे ही मुसलमान, ईसाई, ज्यू आदि जो अहिन्दू हैं, उन्हें अहिन्दू क्यों कहा जाये इसे निःसंदिग्धता से बताया जा सकता है। देखिये—

जैन हिन्दू कैसे ? प्राचीन वैदिक काल से ही जैनियों के पितरों की परम्परागत पितृभू भारतभूमि ही है तथा उनके तीर्थंकरादि धर्म-गुरुओं ने उनके जैन धर्म की स्थापना इसी भारतभूमि में की होने से यह भारतभूमि उनकी पुण्यभू (Holy Land) भी है ही। इस 'अर्थ में तथा केवल इसी अर्थ में' हमारे बहुसंख्यक जैन बन्धु स्वेच्छा से स्वतः को हिन्दू मानेंगे। क्योंकि, यह ऐतिहासिक सत्य है एवं उनमें से जिन लोगों का ऐसा विश्वास है कि, उनका धर्म वैदिक धर्म की शाखा न होकर पूर्णतः स्वतंत्र या अवैदिक धर्म है, उनकी इस धारणा को भी प्रस्तुत परिभाषा से तनिक भी ठेस नहीं पहुँचती। जिस काल में हिन्दू अर्थात् वैदिक, ऐसा हिन्दू शब्द का भ्रान्तिपूर्ण अर्थ माना जाता था तब भर ऐसे स्वतन्त्र धर्ममतवादी जैनियों को उस विशिष्ट अर्थ में स्वयं को हिन्दू कहलाने में विषमता का अनुभव होना स्वाभाविक ही था।

सिक्ख हिन्दू कैसे ? चूँकि उसी वैदिक सप्तसिन्धु की सिन्धुसरिता से सरस्वती तक के आयों के मूलस्थान में उनका आज भी परम्परागत निवास है, अतएव भारतभूमि ही उनकी पितृभू है तथा चूँकि, उनके नानकादि धर्मगुरुओं ने इसी भूमि में उनके सिक्ख धर्म की प्रस्थापना की—उनके धर्म की जड़ भी इसी भूमि में फैली हुई है, अतः इसी अर्थ में यह भारतभूमि उनकी पुण्य भूमि है, Holy-Land है। अतः सिक्ख हिन्दू ही हैं, फिर चाहे वे वेद को मानते हों या न मानते हों, मूर्तिपूजा करते हों या न करते हों।

आर्यसमाजी हिन्दू कैसे ? जहाँ तक पितृभूमि के प्रति गर्व का,

प्रेम का प्रश्न है, आर्यसमाजी तो किसी से पीछे रहने वाला नहीं तथा वैसे ही इस भारत-भूमि को पुण्यभूमि का सम्मान देने में भी वे सदा ही आगे रहते हैं। वे तो हिन्दू हैं ही, फिर चाहे वे पुराण एवं स्मृतियों को मानें या न मानें।

वही बात 'लिंगायत राधास्वामीपन्थी' आदि हमारे यच्चयावत् धर्मों एवं धर्मपन्थों की है अपरंच, 'भील, सन्थाल, कोलेरियन' आदि जो लोग भूत-प्रेतों की या पदार्थ की पूजा करने वाले (Animists) होंगे उनकी भी परम्परागत पितृभक्ति भारतभूमि ही है, तथा कम-से-कम ज्ञात इतिहासकाल से तो उनके पूजापन्थ इसी भारत-भूमि को पुण्यभू भी मानते आये हैं। अतएव वे भी हिन्दू ही हैं। इस प्रकार समस्त हिन्दू बन्धु इस परिभाषा में सहज ही समा जाता है।

पर मुसलमान-ईसाई-ज्यू हिन्दू क्यों नहीं माने जा सकते ? यद्यपि उनमें से ऐसे कई लोगों की परम्परागत पितृभूमि यह भारतभूमि ही है, जो धर्मपरिवर्तन से भ्रष्ट हो चुके हैं, फिर भी उनके धर्म अरब-स्थान पैलेस्टाइन आदि भारतबाह्य देशों में उत्पन्न होने से, वे उन भारत-बाह्य देशों को ही स्वतः की पुण्यभू (Holy Land) मानेंगे। इस प्रकार यह भारत-भूमि उनकी दृष्टि में पुण्यभू न होने से वे हिन्दू नहीं माने जा सकते।

वैसे ही चीनी-जापानी-स्यामी आदि को भी पूर्णतः हिन्दू क्यों नहीं माना जा सकता ?—जो भी, उपर्युक्त लोग धर्म से हिन्दू (बौद्ध) हैं और इस प्रकार भारतभूमि उनकी पुण्यभू है तो भी वही भारतभूमि उनकी पितृभू नहीं है। उनका-हमारा सम्बन्ध धर्म का है। पर, राष्ट्रभाषा, वंश, इतिहास आदि सर्वथा भिन्न है। उनका-हमारा एकराष्ट्रीय सम्बन्ध तो मूलतः ही नहीं है, इसीलिए जो भी वे हिन्दू धर्म के अन्तर्गत हैं तो भी सम्पूर्ण हिन्दुत्व के अधिकारी नहीं हो सकते। स्थिति भी वैसी ही है। जापानी, चीनी आदि बौद्ध होने के नाते स्वयं को हिन्दू धर्म के अनुयायी कहला सकते हैं, पर वे हिन्दूराष्ट्र के अन्तर्गत नहीं रहेंगे, संलग्न तो निश्चित रूप से ही नहीं

कहलायेंगे। 'हिन्दू धर्म परिषद् में' उन्हें समानता से समाविष्ट किया जा सकता है—पर 'हिन्दू महासभा में' अर्थात् हमारी 'हिन्दू राष्ट्रसभा में' उन्हें समाविष्ट नहीं किया जा सकता। उनकी राष्ट्रसभाओं में हमें समाविष्ट नहीं किया जा सकता। पर वैदिक, सिक्ख, भारतीय बौद्ध, जैन, सनातनी आदि हम सब लोग जो हिन्दुत्व के पूर्णतः अधिकारी हैं, एकराष्ट्रीय भी हैं ही, क्योंकि, भारतभूमि केवल हमारी पुण्यभू ही न होकर पितृभू भी है।

शुद्धीकृतों की समस्या भी इस परिभाषा से उसी प्रकार हल की जा सकती है। जो पूर्व में हिन्दू ही थे वे शुद्ध होते ही पूर्ण रूप से हिन्दुत्व के अधिकारी हो जाते हैं, क्योंकि उनकी पितृभू एवं पुण्यभू दोनों ही भारतभूमि ही है। पर, जो अमेरिकन, आंग्ल (अंग्रेज) आदि विदेशी हैं, जिनकी पितृभू भारतभूमि नहीं है, उनके द्वारा 'हिन्दू धर्म का ग्रहण होते ही वे धर्म से हिन्दू हो जाते हैं, पर राष्ट्रीय दृष्टि से भिन्न ही होने से सम्पूर्ण हिन्दुत्व के अधिकारी नहीं माने जा सकते।' क्योंकि, जो भी भारतभूमि उनकी पुण्यभू होगी, तो भी, पितृभू तो कोई दूसरी भूमि होगी। 'उनमें से जो लोग शरीर सम्बन्ध से हमसे विवाहबद्ध होंगे—अर्थात् वंश, जाति, राष्ट्र आदि रूपों से—रक्तबीज से हमसे एकरूप होंगे या हिन्दुस्थान की नागरिकता प्राप्त कर उसे पितृभू मानेंगे तो वे भर पूर्णतः हिन्दुत्व के अधिकारी होंगे।' 'हिन्दू' की हमारी यह परिभाषा 'समस्त संसार में' हिन्दू धर्म का प्रचार करने के मार्ग में किसी भी प्रकार बाधक नहीं है।

उपसंहार

प्रस्तुत लेख की लेखन-सीमा में यथासम्भव विस्तार से हिन्दू शब्द की विवेचना कर उसकी प्रस्तुत परिभाषा के अनुसार हिन्दू किसे कहा जाये तथा अहिन्दू किसे कहा जाये इस प्रश्न को इस प्रकार स्पष्ट किया है कि उसके सम्बन्ध में किसी विवाद की कोई सम्भावना बची नहीं रहती। परन्तु फिर भी अब यह ध्यान में रखना होगा कि उक्त 'हिन्दू' शब्द का प्रयोग हम प्रस्तुत सुनिश्चित अर्थ में ही करें।

योग्य अर्थ में उसका प्रयोग कैसे किया जाये एवं क्यों किया जाये इसको अब स्पष्ट होने से उसके अप्रयोगों को कैसे टाला जाये यह भी अनायास ही उसमें दिग्दर्शित है। परन्तु, फिर भी उसका एक 'अत्यन्त' आत्मघाती अप्रयोग, जिसे हमें विशेष रूप से ध्यान में रखकर टालना चाहिये, उसका भर स्वतन्त्र उल्लेख करना अत्यावश्यक है। जिनमें हिन्दू संगठन की तीव्र लगन है, ऐसे नेताओं के मुख से, समाचारपत्रों में, इतना ही नहीं तो प्रत्यक्ष हिन्दूमहासभा के वाक्पीठ से भी 'हिन्दू तथा जैन', 'हिन्दु तथा सिक्ख', 'हिन्दुओं की अछूतों के प्रति सहानुभूति' ऐसे शब्द प्रयोग केवल उनकी अभ्यस्तता के कारण प्रयोग में आते हुए दिखाई देते हैं। पर इनके स्थान पर ये वाक्य ऐसे होने चाहिये—'सवर्णों को चाहिये कि वे अछूतों के लिए मन्दिर के द्वार खोल दें।' हिन्दू अछूतों के लिए द्वार खोल दें, यह अप्रयोग है, क्योंकि, दोनों ही हिन्दू हैं।' सिक्खों के प्रति सिक्खेतर हिन्दुओं की सहानुभूति है, पंजाब में 'वैदिक एवं सिक्ख एक होकर मुसलमानी आक्रमण का प्रतिकार करें।' ऐसे वाक्य चाहिए। 'सिक्खों के प्रति हिन्दुओं की सहानुभूति है, सिक्ख तथा हिन्दू मुसलमानों का प्रतिकार करें,' 'ये तो घातक अप्रयोग हैं, क्योंकि, उन वाक्यों से जो सिद्ध करना होता है वही असिद्ध होता है।' सिक्ख तथा हिन्दू भिन्न-भिन्न हैं, सिक्ख हिन्दू नहीं हैं, यह, जो अनावश्यक है वही सूचित होता है। इतना ही नहीं तो समाचारपत्रों में ऐसे वाक्य भी आते हैं कि, जैनियों से हम हिन्दुओं का यह निवेदन है कि, वे स्वयं को हिन्दू न कहलाने का दुराग्रह त्याग दें।' इस वाक्य से अधिक वदतोव्याघात का उदाहरण भर क्या दिया जा सकता है? पुरानी अभ्यस्तता से जंग खाई हुई लेखनियाँ अब हमें फेंक देनी चाहिये। 'हिन्दू' शब्द का प्रयोग 'वैदिक' या 'सनातनी' ऐसे किसी एकपक्षीय अर्थ में न करते हुए, उसके स्वतन्त्र, व्यापक एवं निश्चित अर्थ में ही प्रयुक्त करना चाहिए। कल का ही दैनिक पत्र देखिये : 'हिन्दू तथा सिक्ख ये दोनों समाज जिन्ना से चर्चा कर रहे हैं,' ऐसे वाक्य कितने घातक हैं? पर

उनका सदा ही प्रयोग होता है। यदि धार्मिक उपभेदों को व्यक्त करना हो तो वहाँ जैन, सिक्ख, वैदिक, आर्य, सनातनी इन तदर्थक विशिष्ट शब्दों की योजना करें। 'हिन्दू तथा आर्यसमाजी ऐसा न कहते हुए सनातनी तथा आर्यसमाजी' ऐसा कहें।

हिन्दुत्व की प्रस्तुत परिभाषा के लिये शासनाधिकृति भी प्राप्त कर लो !

इसी प्रकार जनगणना के समय अपनी इच्छा के अनुसार किसी को भी 'हिन्दू विभाग' से अलग निकाल कर, अलग से लिखने की शासकीय परम्परा, 'हिन्दुत्व' की हमारी किसी निश्चित परिभाषा के अभाव में चलती आई है, उसे बन्धन लगाने के लिये यह सत्य, सरल, एवं जिसे अब बहुत सी संस्थाओं ने मान्यता प्रदान की है ऐसी हिन्दुत्व की परिभाषा को ही हम एक मुख से शासन के सम्मुख प्रस्तुत करें तथा आगामी जनगणना के पूर्व उसके लिये शासनाधिकृति भी प्राप्त करवा लें, जिससे 'तुम्हारी तो कोई परिभाषा ही नहीं' यह बहाना तो कोई कर नहीं सकेगा।

प्रत्येक हिन्दू को यह कण्ठस्थ होना चाहिये कि, आसिन्धु-सिन्धु यह भारत-भूमिका जिस-जिसकी पितृभू एवं पुण्यभू है वह प्रत्येक हिन्दू है। सन्ध्याकर्म के समान ही इस मन्त्र का जाप भी प्रातःस्मरण में अपने बालकों द्वारा करवाया जाना चाहिये कि :

आसिन्धुसिन्धुपर्यन्ता यस्य भारत भूमिका ।

पितृभूः पुण्यभूश्चैव स वै हिंदुरिति स्मृतः ॥१॥